

शिक्षा और परीक्षा

Shiksha Aur Priksha

शिक्षा, यानी कुछ सीखकर उद्देश्यपूर्ण जीवन जीने का मार्ग प्रदर्शित करने वाला माध्यम। इस दृष्टि से शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य और प्रयोजन होता है, व्यक्ति की बुद्धि, सूझ-बूझ, छिपे गुणों और कार्य-क्षमताओं को विकास को उचित आयाम प्रदान करना। ऐसा शिक्षा के द्वारा संभव हो सका है कि नहीं, यह देखने-जानने के लिए परीक्षा का असंदिग्ध महत्व भी एक सीमा तक स्वीकार किया जा सकता है। फिर जब से विधिवत शिक्षा का क्रम आरंभ हुआ है, कहा जा सकता है कि परीक्षा भी उसके साथ तभी से ही जुड़ी हुई है। शिक्षा का अर्थ केवल किताबी पढ़ाई ही नहीं, अन्य अनेक प्रकार के अनेकविध शिक्षण-परीक्षण भी हैं। प्राचीन काल से धनुर्विद्या या युद्ध-विद्या की शिक्षा दी जाती थी और उसकी परीक्षा भी ली जाती थी। आज भी ऐसा होता है। जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी अनेक प्रकार की शिक्षाएं दी और परीक्षाएं ली जाती हैं। व्यक्ति या शिक्षार्थी उनमें सफल-असफल भी होत या घोषित किए जाते हैं। पर यहां 'शिक्षा और परीक्षा' शीर्षक से वास्तविक अभिप्राय है-वर्तमान शिक्षा-पद्धति और उसके साथ जुड़ा सालाना परीक्षाओं का क्रम, जो दिन-प्रतिदिन खोखला, थोथा और व्यर्थ प्रमाणित होकर अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न कर रहा है। हिंसा, गुंडागर्दी और भ्रष्टाचार का रूप बनकर एक समूची पद्धति के सामने एक मोट प्रश्न-चिन्ह लगा रहा है।

विगत पचास वर्षों से स्वतंत्र भारत में आज भी जो शिक्षा-प्रणाली चल रही है, वह ब्रिटिश-साम्राज्यकाल की विरासत है। हो सकता है, उस काल में इसका कोई सामयिक महत्व और उपयोग रहा हो, पर आज यह पूर्णतया अनुपयोगी एवं व्यर्थ प्रमाणित हो चुकी है। यही बात उसी युग से चली आ रही वर्तमान परीक्षा-प्रणाली के बारे में भी सत्य है। फिर भी बड़े खेद और आश्चर्य की बात है कि स्वतंत्र भारत में पचास वर्ष बाद भी हम गले पड़े उसी बेसुरे ढोल को बजाए जा रहे हैं। उसमें सुधार और परिवर्तन लाने के लिए लाखों रुपए खर्च कर आयोग बैठते हैं। उसकी रिपोर्ट्स या सिफारिशें आती हैं। उन्हें या तो किन्हीं अलग फाइलों में छुपा दिया जाता है या फिर रद्दी की टोकरी में डाल दिया जाता है। उधर शिक्षा-परीक्षा

दोनों ही दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक हास्यास्पद और खिलवाड़ बनती जा रही है। वे व्यक्ति की वास्तविक योज्यता का मापदंड कतई नहीं बन पा रही। है न अजब बात।

शिक्षा जगत की यह कितनी विषम दिशा है कि आज शिक्षा पाना, स्कूल-कालेजों में जाना भी अन्य अनेक फैशनों के समान मात्र एक फैशन बनकर रह गया है। उसका उद्देश्य ज्ञान या सूझ-बूझ अर्जित करना, व्यक्ति के छिपे गुणों-शक्तियों को उजागर कर उसकी कार्य-क्षमताओं का विकास करना न होकर, फैशनपरस्ती के नाते कुछ डिप्लोमे-डिग्रियां प्राप्त करना ही रह गया है। यही कारण है कि आज के स्कूल-कॉलेज के छात्र उतना पढ़ने-लिखने पर ध्यान नहीं देते, जितना कि जिस किसी भी तरीके से डिप्लोमे-डिग्रियां हथियाने का प्रयास करते हैं। इस प्रयास में सारी शिक्षा-दीक्षा तो मजाक बनाकर रह ही जाती है, परीक्षा भी मजाक से अधिक कुछ नहीं बन पाती। शिक्षार्थी कक्षाओं में पढ़ता नहीं या पढ़ना नहीं चाहता। स्पष्ट है कि ऐसी स्थिति में अध्यापक भी पढ़ाना नहीं चाहते या पढ़ा नहीं पाते। पर कक्षाओं की सीमा-रेखाएं पार कर डिप्लोमे-डिग्रियां लेने के लिए परीक्षाएं तो देनी ही पड़ती हैं। उन्हें देने के लिए परीक्षा के कुछ दिन पहले या उन्हीं दिनों में विद्यार्थी सस्ते और पके-पकाए साधनों-अर्थात् कुंजियों और गाइडों का सहारा लेता है। जब उनसे भी कुछ नहीं बन पाता, तब नकल करने का प्रयास करता है। नकल भी मात्र ताक-झांक करके नहीं, बल्कि पुस्तकें-कुंजियां-गाइड और कॉपियां परीक्षा-भवन में सांि ले जाकर की जाती हैं। फिर भी हमारी आंखें नहीं खुलतीं।

स्कूल और कॉलेज स्तर के शिक्षा क्रम में एक स्पष्ट अंतक आज सर्वत्र देखा जा सकता है। प्राथमिक स्कूलों में अध्यापक पढ़ाते कम और आपस में गप्पें अधिक हांकते हैं। कई बार तो एक क्लास में इकट्ठे होकर कई-कई अध्यापक छात्रों के सामने ही चाय-सिगरेट भी पीते हुए देखे जा सकते हैं। कन्या पाठशालाओं में अध्यापिकाएं गप्पें मारने, पत्र-पत्रिकाएं पढ़ने या फिर बुनाई-कढ़ाई में व्यस्त देखी जा सकती है। फिर भी उनके छात्र गलत-शलत पढ़-लिखकर अगली कक्षाओं में चढ़ते जाते हैं। उच्च माध्यमिक और उच्चतर स्कूलों के अध्यापक कक्षाओं में पढ़ाना गुनाह समझ छात्रों के गुरप-ट्यूशन स्कूलों में ही, अपने घरों या किसी एक छात्र के घर में पढ़ाना अपना बुनियादी अधिकार समझते हैं। रिश्तत या धमकी के कारण परीक्षा से पहले ही प्रश्नपत्रों की गोपनीयता प्रगट हो जाना भी आम बात हो गई है। इस प्रकार शिक्षा और परीक्षा दोनों ही व्यापार बनकर रह गए हैं। निश्चय ही

इस प्रकार की स्थितियां स्वस्थ नहीं कही जा सकती। फिर भारत जैसे विकासेन्मुख देश के लिए तो कतई नहीं।

स्कूलों के बाद कॉलेज का क्रम आता है। वहां अध्यापक का काम कक्षा में आकर हाजिरी लेना और फिर बिना इस बात की चिंता किए कि छात्रों को कुछ समझ भी आ रहा है या नहीं, भाषण झाड़ना और चले जाना भर होता है। दूसरे कॉलेजों में अन्याय गतिविधियां, छुट्टियां भी इतनी अधिक रहती हैं कि उनकी आड़ में कई अध्यापक अपने कोर्स आरंभ तक नहीं करते या पढ़ाने के नाम पर मात्र टकराते रहकर ही अपने कोर्स समाप्त कर देते हैं। परिणामस्वरूप परीक्षाओं के अवसर पर जो कुछ होता है, उसकी चर्चा हम पीछे कर आए हैं। इस प्रकार शिक्षा और परीक्षा का सारा ढांचा ही एक खिलवाड़ बनकर रह गया है।

आज शिक्षा और परीक्षा का प्रयोजन ज्ञानार्जन न सही, जीविकोपार्जन तो समझा ही जाता है। पंतु वर्तमान शिक्षा-परीक्षा-प्रणाली इस प्रयोजन की पूर्ति में भी तो कोई विशेष सहायक प्रमाणित नहीं हो पा रही है। कारण यह कि शिखा और परीक्षा दोनों रोजगारान्मुखी न होकर मात्र उस मशीन का काम कर रही हैं, जिसका काम अपनी जड़ता में भी लगातार उत्पादन करते जाना हुआ करता है। परिणामस्वरूप मशीन के इन दोनों सांचों से गुजरकर बाहर आने वाला व्यक्ति सच्चे और सही अर्थों में, इनके माध्यम से रोजगार पाने के योज्य अधिकारी नहीं सिद्ध होता। इस व्यवस्था में जिस किसी तरह कुछ पा लेना एक अलग बात है।

ऐसी विषम स्थिति में आज आवश्यकता इस बात की है कि इस निर्जीव शिक्षा-परीक्षा के ढांचे में बदलक उसे सजीव, प्राणवान और सक्रिय बनाए जाए। इस सड़ी-गली और बहुत पुरानी पड़ चुकी शिक्षा-परीक्षा की मशीन को युगानुकूल अपने देश की आवश्यकताओं के अनुरूप बदला जाए। समय के साथ और भी बढ़-फैलकर वह समूचे राष्ट्र को ही मलित कोढ़ बना देगी। वह दिन कभी न आए, इसका प्रयास आज से ही आरंभ कर देना चाहिए। इसी में भलाई है। जितनी देरी होगी, उतना ही अनिष्ट होगा, यह तथ्य हर जागरुक व्यक्ति जानता अवश्य है, पर आगे आकर कुछ करने को कोई तैयार नहीं दिखता। कितनी सुखद स्थिति है।